Q(1) Discuss the Garner versus murray decision.

Ans:- साझेदारी की स्थापना के या दो से अधिक साझेदारो के आपसी समझौते के आधार पर होती है। विभिन्न साझेदारों के सम्मिलित रूप को साझेदारी फर्म कहा जाता है। साझेदारी फर्म का व्यवसाय उस समय एक समुचित रूप से चलता रहता है जबतक इसके लिए सभी बातें अनुकूल रूप से रहती है लेकिन कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती है जिसके अनुसार साझेदारी फर्म का व्यवसाय बन्द करना पड़ता है।

साझेदारी फर्म का विघटन किसी साझेदार के दिवालिया होने के कारण भी होता है। इस सम्बन्ध में Garner Vs murray विवाद का निर्णय महत्वपूर्ण है। 1903 में Justice Joyce ने Garner vs murray के मुकदमे में जो निर्णय दिया है, दिवालिया साझेदार के पूँजी के कमी के सम्बन्ध में नए सिद्धान्त को स्पष्ट किया है। दूसरे शब्दों में दिवालिया साझेदार की पूँजी की कमी को अन्य साझेदारों में विभाजित करने के सम्बन्ध में निर्णय दिया गया है। इस निर्णय को समझने के पहले Garner Vs murray विवाद के तथ्यों पर प्रकाश डालना आवश्यक है।

इस मुकदमें के अन्तर्गत एक फर्म में Garner, murray और Vilkince नामक तीन साझेदार थे। इनकी पूँजी असमान थी उनके व समान अनुपात में लाभालाभ बाँटते थे। इस फर्म का विघटन 30 June 1900 में Court के आदेश द्वारा किया। फर्म का विघटन होने पर साझेदारों की सम्पत्तियों को बेचा गया और बेचने से प्राप्त रकम में से लेनदारों का भुगतान किया गया लेकिन साझेदारों की पूँजी के शेष का भुगतान करने के लिए पर्याप्त रकम नहीं बच पायी। Vilkince का Capital A/c Credit Balance दिखा रहा था इसलिए Vilkince दिवालिया हो गया और वह कुछ भी देने के योग्य नहीं रहा। ऐसे हालत में Vilkince के Capital A/c की Deficiency का विभाजन करने के सम्बन्ध में Garner और murray के बीच विवाद उत्पन्न हो गया और दोनों ने कोर्ट का सहारा लिया। जब Court में यह मुकदमा दायर हुआ तो Justice ने दिवालिया साझेदार की Deficiency को अन्य साझेदारों के बीच विभाजन करने के लिए निर्णय दिया गया। साथही अन्य साझेदारों को मिलने वाली हानि के सम्बन्ध में भी

निर्णय दिया गया। इस विवाद का जो निर्णय किया गया वह निम्नलिखित रूप में है :-

(1) दिवालिया साझेदार की पूँजी की कमी को अन्य साझेदारों में पूँजी के अनुपात में बाँटना :- Garner vs murray विवाद में न्यायाधीश द्वारा यह निर्णय दिया गया कि दिवालिया साझेदार Wilkinee की पूँजी की Deficiency एक पूँजीगत हानि है इसलिए इसका विभाजन शेष्य साझेदारों अर्थात् अन्य साझेदारों की पूँजी के अनुपात में होना चाहिए। लाभ-हानि अनुपात में इसका नहीं हो सकता है। इसका अर्थ यह है कि दिवालिया साझेदार के Capital A/c को Realisation A/c के बाद सबसे पहले बनाना चाहिए और दिवालिया साझेदार के Capital A/c की जो Deficiency है इसे अन्य साझेदारों के बीच उनकी पूँजी के अनुपात में बाटना चाहिए।

(2) बट्टाली की हानि को शेष्य साझेदारों द्वारा नगदी में लाना :- Garner vs murray विवाद के निर्णय में इस बात को भी स्पष्ट किया गया है कि शेष्य साझेदार अपने हिस्से की बट्टाली की हानि को Cash के रूप में लाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि दिवालिया साझेदार को छोड़कर जब अन्य सभी साझेदार की Capital A/c बनाते समय बट्टाली की हानि को अर्थात् Realisation A/c के loss को Dr. side दिखाया जाता है और इतने ही रकम Cash और Bank A/c के रूप में Cr. side में दिखाया जाता है। यह Garner vs Murray Rule माना जाता है।

(3) पूँजी का अनुपात उस पूँजी के आधार पर निकालना जो विघटन के रूप बने हुए चिट्ठे में थी :- Garner vs murray निर्णय में पूँजी का अनुपात निकालने के लिए उस पूँजी को आधार माना गया जो साझेदारी के विघटन के पहले आर्थिक चिट्ठे में दिखाई गई थी। इसी पूँजी के अनुपात में दिवालिया साझेदार की पूँजी की कमी को अन्य सभी साझेदार में विभाजित करना चाहिए। इस सम्बन्ध में इस बात पर भी ध्यान रखना चाहिए की साझेदारों की पूँजी स्थायी हो या अस्थायी। यदि पूँजी अस्थायी है तो ऐसी हालत में विघटन के पहले बनाए गये Balance Sheet में दी हुई पूँजी में Reserve Fund और अन्य

Profit का भी Adjustment कर देना पड़ेगा जो कि अब Balance Sheet में दिए हुए हैं लेकिन यह ध्यान रखना चाहिए कि इतनी वसूली होने के बाद भी हानि को सम्मिलित नहीं किया जाएगा। अंत: Adjustment के बाद जो पूँजी का अनुपात होता है उसी के आधार पर दिवालिया साझेदार की कमी को अन्य सभी साझेदारों के बीच बाँटा जाएगा।

Garner Vs murray विवाद के निर्णय में उपरोक्त बातें स्पष्ट कर दी गई हैं तभी से Garner Vs murray Rule प्रचलित हुआ। Garner Vs murray मुकदमें के निर्णय का प्रभाव यह हुआ कि दिवालिया साझेदार Villiamee की Capital and Deficiency को अन्य साझेदार Garner Vs murray ने अपनी Capital A/c के अनुपात में विभाजित किया।

Garner Vs murray विवाद के निर्णय का दूसरे दिशा में प्रचलन हुआ। वर्तमान समय में भारत में भी कुछ संशोधन के साथ यह नियम लागू होता है। भारत में Partnership Deed विशेष महत्व रखता है। यह Deed बनाते समय साझेदार आपस में यह तय कर लेते हैं कि किसी साझेदार के दिवालिया होने समय उसकी पूँजी की कमी को किस अनुपात में विभाजित किया जाएगा। यदि साझेदारी संलेख में दिवालिया साझेदार की पूँजी को पूरा करते हैं। यदि निश्चित अनुपात दिया हुआ नहीं रहता है यदि निश्चित अनुपात दिया हुआ नहीं रहता है तो Garner VS murray निर्णय के अनुसार ही अन्य साझेदारों के पूँजी के अनुपात में दिवालिया साझेदार की पूँजी को 'Deficiency' को बाँटा जाता है। Garner VS murray निर्णय को Indian Practice में लागू किया जाता है। केवल एक बात का अन्तर आवश्य है। English Practice के अनुसार अन्य साझेदार Realisation A/c के Loss को नगदी में भी पूरा करते हैं जबकि Indian Practice में ऐसा नहीं किया जाता है। शेष वही सब नियम लागू हैं जो कि Garner VS murray Rule के English Practice में लागू किए जाते हैं।

निष्कर्ष :- निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि किसी भी साझेदार के दिवालिया होने की स्थिति में Garner Vs murray निर्णय का महत्वपूर्ण स्थान है। यह निर्णय Justice Joyce ने दिया जो आज भी लागू होता है। भारत में भी यह नियम आवश्य ही लागू होता है, लेकिन Partnership Deed के अनुसार ही दिवालिया साझेदार की पूँजी की कमी को अन्य साझेदार आपस में बाँटते हैं।

Q. अंकेक्षण से आप क्या समझते हैं ? इसके उद्देश्यों का वर्णन कीजिए ?

Ans:- साधारण अर्थ में अंकेक्षण लेखा पुस्तकों की जाँच है। अतः साधारण व्यक्ति अंकेक्षण का अर्थ लेखा पुस्तकों की गणितीय जाँच से लगाते हैं। पर तकनीकी दृष्टि से अंकेक्षण का अर्थ लेखा पुस्तकों की शुद्धता, पूर्णता तथा नियमानुकूलता की जाँच से है।

अंकेक्षण को विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न शब्दों में परिभाषित किया है। जिनमें से प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं:-

① L.R. Dicksee के अनुसार - "अंकेक्षण हिसाब-किताब के लेखों की जाँच है ताकि यह स्पष्ट हो सके कि लेखे पूर्ण एवं सही रूप से सम्बन्धित लेन देनों के लिए किये गये हैं। साथ ही यह भी निश्चित हो सके कि सभी खोदे अधिकृत रूप से किये गये हैं।"

② R.G. Williams के अनुसार:- "अंकेक्षण वे आशय व्यापार की पुस्तकों, खातों एवं प्रमाणकों की जाँच से है जिससे यह पता चल सके कि चिट्ठा नियमानुसार बनाया गया है या नहीं और वह व्यापार की सच्ची तथा उचित चित्र प्रस्तुत करता है या नहीं।"

③ A.K. Chanda के अनुसार:- "अंकेक्षण न कोई जाँच है और न केवल इसका उद्देश्य गलतियाँ निकालना है बल्कि इसका उद्देश्य व्यवस्था की अनियमितताओं, कमियों तथा असावधानीयों को सामने लाना है। जिससे भावी योजनाएँ अधिक कुशलता, शीघ्रता और नियमितता से चलायी जा सके और इसके लिए आवश्यक सुझाव दिया जा सके।"

④ R.K. Mautz के अनुसार:- अंकेक्षण को सम्बन्ध वैधानिक सम्बन्धी विवरणों तथा प्रतिवेदनों की विश्वसनीयता एवं सत्यता ज्ञात करने हेतु लेखा सम्बन्धी आँकड़े के सत्यापन से है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर अंकेक्षण की एक सर्वसम्मत परिभाषा निम्न शब्दों में दी जा सकती है:- "अंकेक्षण वह कला एवं विज्ञान है जिसके द्वारा किसी संस्था की लेखा पुस्तकों की जाँच एक योग्य, ईमानदार तथा निष्पक्ष व्यक्ति द्वारा प्रमाणकों, प्रपत्रों, सूचनाओं तथा स्पष्टीकरण द्वारा की जाती है। जिसका उद्देश्य एक निश्चित अवधि के बाद तैयार किये गये लाभ-हानि खाता तथा चिट्ठा की सत्यता को बताना है एवं रिपोर्ट देना है कि निश्चित अवधि के लिए बनाये गये अन्तिम खाते सही तथा उचित स्थिति प्रकट करता है तथा वे नियम के अनुकूल है या नहीं।"

अंकेक्षण के उद्देश्य

Spicer & Pegler के अनुसार — "अंकेक्षण का मुख्य उद्देश्य नियोक्ता अथवा उसके कर्मचारियों द्वारा तैयार किये गये खातों एवं विवरणों का सत्यापन करना है।"

अंकेक्षण के उद्देश्यों को निम्नलिखित भागों में बाँटे जा सकते हैं —

1. अंकेक्षण का मुख्य उद्देश्य।
2. अंकेक्षण का सहायक उद्देश्य।
3. अंकेक्षण के अन्य उद्देश्य।

① **मुख्य उद्देश्य** :- अंकेक्षण का मुख्य उद्देश्य लेखों की सत्यता, पूर्णता एवं नियमानुकूलता का ज्ञान प्राप्त करना होता है अतः अंकेक्षण के मुख्य उद्देश्य में यह ज्ञात करना है कि :-

(a) लेखा पुस्तकों में किये गये लेखे ठीक विश्वासनीय एवं नियमानुकूल है या नहीं।

(b) लाभ हानि खाता द्वारा दिखाया गया परिणाम सत्य एवं उचित है या नहीं।

(c) चिट्ठा ठीक प्रकार से बनाया गया है या नहीं तथा इसके द्वारा दिखाया गया स्थिति सत्य तथा उचित है या नहीं।

इस प्रकार मुख्य उद्देश्य के अन्तर्गत हिसाब किताब की सत्यता पूर्णता तथा नियमानुकूलता की जाँच करना आता है। यही कारण है कि प्रत्येक अंकेक्षक को अपनी रिपोर्ट लिखते समय इन तीनों तथ्यों पर विचार करना पड़ता है।

② **सहायक उद्देश्य** :- सहायक उद्देश्य मुख्य उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होते हैं। अतः सहायक उद्देश्यों में मुख्य रूप में निम्नलिखित उद्देश्य आते हैं :-

(a) गलतियों का पता लगाना।

(b) छल-कपट का पता लगाना।

(c) त्रुटियों तथा छलकपटों को रोकना।

(a) **त्रुटियों (गलतियों) का पता लगाना** :- त्रुटि करना मानव का सहज स्वभाव है। आजकल मशीनों का प्रयोग लेखा करने में अधिक होने के कारण त्रुटियों की सम्भावना और भी बढ़ गयी है। त्रुटियाँ लेखापालों या लिपिकों की लापरवाही अज्ञानता एवं असावधानी के कारण होती है। इन गलतियों या त्रुटियों के कारण संस्था का लाभ हानि खाता तथा चिट्ठा वास्तविक की सही स्थिति को प्रकट नहीं करता है। इस प्रकार अंकेक्षण का मुख्य उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो पाती है।

साधारणतः त्रुटियाँ निम्न प्रकार के होती हैं :-

(a) भूल की त्रुटियाँ (Errors of omission)
(b) सैद्धान्तिक त्रुटियाँ (Errors of Principals)
(c) क्षतिपूरक त्रुटियाँ (Compensatory Errors)
(d) लेखों की त्रुटियाँ (Errors of Accounts)
(e) गणितीय त्रुटियाँ (mathematical errors)

भूल की त्रुटियों वैद्धान्तिक अशुद्धियों, क्षतिपूरक त्रुटियाँ आदि का प्रभाव तलपट पर नहीं पड़ता है। लेखों तथा गणितीय त्रुटियों का प्रभाव तलपट पर पड़ता है। अधिकांश त्रुटियों को Test checking द्वारा पता लगाया जा सकता है। इन सभी त्रुटियों का प्रभाव लाभ हानि खाता तथा चिट्ठा पर पड़ता है। अतः अंकेक्षक को इनका पता सावधानी, तर्कना और चतुराई से लगाना चाहिए और अंकेक्षण के समय आनेवाली त्रुटियों को दूर करना चाहिए। उसे अपने इस दायित्व का ठीक से पालन करना चाहिए। यदि त्रुटियाँ हो तो अंकेक्षक का कर्तव्य होता है कि वह इनके जिम्मेदार को अवगत करा दे। ऐसी दशा में उसे लेखापालक एवं अंकेक्षक दोनों ही तरह काम करना पड़ेगा।

(iii) छलकपट का पता लगाना :—

छलकपट वही खातों में जान बूझकर योजनाबद्ध रूप से व्यावसाय को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया जाता है। छलकपट का प्रभाव व्यावसाय के लाभ हानि खाता एवं चिट्ठा पर पड़ता है। ये व्यापार के सही तथा उचित चित्र प्रस्तुत नहीं करते।

छलकपट तीन प्रकार के होते हैं :—

(a) रोकड़ का गबन करना।
(b) माल, प्रतिभूति या अन्य सम्पत्तियों का गबन करना।
(c) हिसाब किताब में गड़बड़ी करना।

(a) रोकड़ का गबन करना :— बड़ा आसान तथा सरल होता है। बेईमान कर्मचारी प्राप्त रोकड़ को पुस्तक में बिल्कुल नहीं दिखाता अथवा काल्पनिक भुगतान दिखाकर उस रकम का गबन कर देता है। इस गबन को पता लगाने के लिए प्रत्येक प्रमाणक को गहन जाँच करनी पड़ती है। प्राप्तियों तथा भुगतानों की पूर्ण जाँच करना चाहिए।

(b) माल प्रतिभूतियों आदि का गबन उन संस्थाओं में अधिक होती है जहाँ आन्तरिक निरीक्षण प्रणाली संतोषप्रद नहीं होता है। माल का गबन करने के ढंग: भिन्न तरीके अपनाये जाते हैं जैसे :- स्टोर से माल ज्यादा कर देना, माल का प्रयोग निजी कार्यों में करना, कम वापसी माल को गबन करना, प्रतिभूतियों का गबन करना इत्यादि।

माल के गबन को पता लगाने के लिए स्टोर की पर के रिकार्ड का जाँच करना, आयात एवं निर्यात माल की जाँच करना, क्रेताओं एवं विक्रताओं से पत्र व्यवहार करना, सन्देह होने पर कर्मचारियों के दूसरे की तलाशी करना तथा आन्तरिक निरीक्षण प्रणाली की भलीभाँति जाँच करनी चाहिए।

(c) खातों में गड़बड़ी संस्था के अधिकारियों द्वारा की जाती है। खाते व्यापार का दर्पण होते हैं। इसमें व्यापार की प्रगति का सही-सही मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। खातों में गड़बड़ी करने के उद्देश्य लाभ को वास्तविक लाभ से अधिक या कम दिखाना अथवा बचाना, बिक्री कर बचाना इत्यादि होता है। ये गड़बड़ी सम्पत्तियों, दायित्वों, क्रय-विक्रय के सम्बन्ध में की जाती है। गड़बड़ी को जाँचने के लिए अंकेक्षक को अपनी पूर्ण कार्य-कुशलता, बुद्धिमता सावधानी एवं कार्य करना चाहिए। इसके बाद भी त्रुटियों तथा छल कपट ए जाँच तो अंकेक्षक का इसके लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है। अंकेक्षक एक रखवाली कुत्ते के समान है न कि शिकारी कुत्ते के समान।

(iii) त्रुटियों तथा छलकपटों को रोकना :- अंकेक्षण त्रुटियों तथा छल कपटों को पूर्णतया रोक नहीं सकता है ~~अंकेक्षण त्रुटियों~~ परन्तु इसकी जाँच के भय के कारण इनमें कमी अवश्य हो जाती है। अंकेक्षण के नैतिक प्रभाव से त्रुटियों तथा छल कपटों को कम करने में मदद मिलती है। अंकेक्षक त्रुटियों तथा छल कपटों को रोकने के लिए उचित सलाह दे सकता है। जिनके पालन से त्रुटियाँ कम हो सकती हैं। इस प्रकार त्रुटियों तथा छल-कपटों को रोकने में अंकेक्षण का अप्रत्यक्ष योगदान अवश्य होता है

(3) अन्य उद्देश्य :- मुख्य एवं सहायक उद्देश्यों के अतिरिक्त अंकेक्षण के अन्य उद्देश्य भी हैं। जिन्हें प्रासंगिक उद्देश्य कहा जाता है। इसमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण हैं :-

(i) कर्मचारियों पर नैतिक प्रभाव डालना :- इससे कर्मचारी

अनुशासित, ईमानदार तथा कर्तव्यनिष्ठ हो जाते हैं और त्रुटियाँ तथा छलकपट की सम्भावना कम हो जाती है।

(ii) अंकेक्षण का उद्देश्य वैधानिक आवश्यकताओं का पालन करना भी होता है।

(iii) अंकेक्षण का उद्देश्य सरकारी अधिकारियों को सन्तुष्ट करके लेखों पर उनका विश्वास जमाना होता है।

(iv) अंकेक्षक वित्तीय मामलों पर संस्था के प्रबन्धकों को आवश्यक एवं उचित सलाह देता है।